**E-ISSN:** 2706-8927
**P-ISSN:** 2706-8919
IJAAS 2019; 1(2): 214-216
Received: 17-08-2019
Accepted: 26-09-2019

**संगीता कुमारी झा**
शोधार्थी, विश्वविद्यालय, हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

**Corresponding Author:**
**संगीता कुमारी झा**
शोधार्थी, विश्वविद्यालय, हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

# तुलसी दास की दोहावली का नैतिक मूल्यांकन

## संगीता कुमारी झा

**सारांश**
हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल नीतिकाव्य का स्वर्णकाल था। हिन्दी के सम्पूर्ण नीति–काव्य में तुलसी का एक विशिष्ट स्थान है और इस स्थान का प्रधान उनके द्वारा विचरित दोहावली है। दोहावली में विविध–विषयक दोहे है। दोहावली के अन्तर्गत कवि ने नीति, भक्ति, राम–महिमा, राम के प्रति चातक के आदर्श प्रेम तथा आत्मविषयक–उक्तियों का हृदयग्राही चित्रण किया है तत्कालीन परिस्थितियों के ध्यान में रखकर कलियुग का सुन्दर वर्णन किया है। यद्यपि सभी दोहों के मूल रूप में नैतिक तत्व को विशेष ध्यान में रखा गया है। यह कृति एक भक्ति–नीतिकाव्य है। इसमें अनुभूतियों की सरसता तथा अभिव्यक्ति की बंकिमता के दर्शन आद्यन्त है। यह ग्रन्थ तुलसीदास के व्यापक जीवनानुभव से सम्पन्न एक प्रौढ़ कृति है जिसका क्षेत्र अत्यन्त विशद् है। वेदमूलक भारतीय संस्कृति की महता की रक्षा, परम्परानुगत भक्ति भावना का प्रतिपादन, शुद्धाचार नीति, समाज–समीक्षा जैसे अनेक महत्वपूर्ण तत्व–बिन्दुओं के प्रभावी स्पर्श से युक्त होने के कारण यह कृति 'मानस विनयपत्रिका', कवितावली और गीतावली के बाद तुलसीदास की सर्वाधिक उत्कृष्ट एवं महत्वपूर्ण कृति है। तुलसीदास ने दोहावली में नैतिकमूल्य के द्वारा समाज–समीक्षा की है।

**प्रस्तावना**
तुलसीदास ने अपनी काव्य रचना का मूल उद्देश्य लोकमंगल स्वीकार किया है। लोकमंगल का विधान तभी हो सकता है जब समाज एवं परिवार में नैतिक मूल्यों की स्थापना हो तथा उदत्त जीवन मूल्यों पर सबका ध्यान केन्द्रित हो। रामचरितमानस में तुलसी की दृष्टि रामकथा के माध्यम से आदर्श जीवन मूल्यों की स्थापना करने की ओर केन्द्रित रही है। यही कारण है कि उसमें जीवन के विविध प्रसंगों का उल्लेख है और जीवन के किसी भी उपेक्षा नहीं हो सकी है। तुलसी एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करना चाहते थे जो समाज एवं परिवार में नैतिक मूल्यों की पक्षधर हो।
नैतिक मूल्य कई कसोत्यिों पर मापा जा सकता है। जीवन के विविध क्षेत्रों में चलने के लिए जो सिद्धांत नियम उपयोगी होते हैं उनसबकी संज्ञा नीति हो जाती है। जीवन के नाना क्षेत्रों के मार्गो पदेशक निम्न विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों के व्यवहारिक ज्ञान होते हैं। भारतीय–साहित्य–परम्परा में तीन प्रकार की उक्तियों को काव्य के अन्तर्गत मानती हैं–जिसका संबंध किसी प्रकार की अनुसुक्ति की रमणीयता से हो, जिसका संबंध किसी प्रकार की तथ्यकथन–संबंधी रमणीयता से हो और जिसका संबंध किसी के स्वभाव या स्वरूप की रमणीयता से हो। कहानी या उपन्यास कुतूहलवृति से संबंध रखते है और नीति का कथन जिज्ञासा से विशेष संबंध रखता है। हिन्दी में नीति लिखनेवाले कर्ता कई प्रकार के हैं। संत लोग भी नीति की बाते कहते हैं, जिसका संबंध अधिकतर उनके पंथ से हुआ करता है लोकानुभव को व्यक्त करने के लिए भी नीतिकथन किया जाता है। भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है और इसमें गार्हस्थ्य जीवन सर्वप्रमुख माना जाता है। इसलिए लोकानुभव–संबंधी नीतियों का संबंध इन्हीं दोनों से दिखाई देता है। विशेष प्रकार की भी नीति हो सकती है जैसे राजनीति, धर्मनीति आदि। संतों की रचनाओं को धर्मनीति के अन्तर्गत रख सकते हैं। राजनीति की रचनाएँ कुछ तो संस्कृत के राजनीति–संबंधी ग्रन्थों के अनुवादरूप में मिलती हैं और कुछ स्वतंत्र रूप में निर्मित हुई। जैसे 'चाण्क्यनीति' के अनुवाद प्रायः होते रहे हैं। जैसा कहा जा चुका है नीति के कथन रूखे–सूखे भी हो सकते हैं और सरस भी बनाए जा सकते हैं। जो उक्तियाँ अंतः करण की प्रेरणा से अर्थात् अनुभूती–प्रेरित होगी उनकी सरसता साहित्यिक दृष्टि से अवश्य विचारणीय होगी। रहीम की उक्तियाँ ऐसी प्रायः मिल जाती हैं जो अनुभूतिप्रेरित है और जिसमें सरसता इसी कारण आ गई है। उन्होंने कड़वी बात कहनेवाले या अप्रियवादी के संबंध में कहा है–

**खीरा सिर सों काटिये भरिये नमक बनाय**
**रहिमन करूवे मुखन को चाहिएत यहि सजाय** [1]

इसमें कड़वेवचन बोलनेवाले के प्रति जो रोष है उसकी पूरी अभिव्यक्ति है। अनुभूतिप्रेरित जो रचनाएँ सरस होकर सामने आएँगी उन्हें काव्य में गृहीत करने में संकोच नहीं हो सकता।

ये रसोक्ति नहीं, पर भावोक्ति अवश्य होंगी। हिन्दी में नीति की रचना करने वाले जितने प्रकार के कर्ता है उनमें से धर्म संबंधी नीतियों का उल्लेख करनेवाले तत्वतः नीतिवादी नहीं है। उनका लक्ष्य अपनेमत को आचार पद्धति का उपदेश देना है अथवा दार्शनिक तत्वज्ञान को नीतियों के माध्यम से व्यक्त करना है। लोकानुभव होने के बदले उसमें उपदेश अधिक है करना वर्जित करते हैं तब उपदेश ही देतें हैं–

**"जो तोकूँ काँटा बुबै ताहि बोव तू फूल**
**तोकूँ फूल के फूल हैं वाकूँ हैं तिरसूल।** [2]

कबीर की धर्मनीति काँटे का उत्तर फूल से देने को कहती है, पर लोकनीति 'कंटकेनैव कंटकम् के मार्ग पर चलनेवाली दिखाई देती है। धार्मिक या उपदेशात्मक नीतियों को नीतिविषयक रचनाओं से पृथक् ही रखना अच्छा होगा। हिन्दी के नीतिकारों में रहीम और दीनदयाल गिरि साहित्यक कोटि के नीतिकार है। बृंद मध्यममार्गी है और गिरिधर शुद्ध नीति के कर्ता है। 'दोहावली' में नीतिविषयक दोहो की बहुलता है जिसके आधार पर तुलसी तत्कालीन समाज को ध्यान में रखकर नैतिक व्यवहार का वर्णन किया है।

'दोहावली' में लौकिक जीवन की सुखमयता को लक्ष्य करके लिखे गए नीति वचनों आत्मसात करने का उपदेश देते हैं। वे दोहावली के माध्यम से जनमानस को यह बतलाना चाहते हैं कि सच्चा मित्र कैसा होना चाहिए–

**"तुलसी असमय के सखा धीरज धरम विवेक।**
**साहित सहस सत्यव्रत राम भरोसो एक।।** [3]

तुलसीदास ने सामाजिक और परिवारिक विघटन को ध्यान में रखते हुए, व्यक्ति को धर्म और नीति का अवलंबन और श्रीराम के चरणों में प्रेमपूर्वक रहना ही उत्तम माना है–

**चलब नीतिमग, रामपग–नेह–निबाहब नीक।**
**तुलसी पटिरिअ सों बसन जो न पखारे फीका।।** [4]

नीति पर चलना अर्थात् नीति का पालन करना तथा भगवान श्रीराम के चरणों से अटूट प्रेम करना ही संसार में मनुष्यों के लिए उतम है। तुलसीदास कहते हैं कि जिन वस्त्रों का रंग धोने पर भी फिका नहीं होता, सदा ऐसे वस्त्रों को ही धारण करना चाहिए।

तुलसीदास उत्तम नैतिकता में जनमानस को विवेकपूर्वक व्यवहार पर बल देते हैं। विवेकपूर्ण व्यवहार के विषय में वे कहते हैं कि जो आय के अनुमान के अनुसार व्यय करता है तथा संसार में विवेकपूर्ण व्यवहार करता है वही मनुष्य समर्थ्यवान, बुद्धिमान, पुण्यात्मा, साधु और चतुर है।

**"तुलसी सो समरथ सुमति सुकृती, साधु समान।**
**जो बिचारि व्यवहरइ जग, खरच लाभ अनुमान।।** [5]

तुलसी कहते हैं कि लोग बुड़ाइयों से इस प्रकार प्रभावित हो जाते हैं जिस प्रकार लोहा बड़ी ताव्रता के साथ चुंबक के साथ जुड़ जाता है। नीच और पापी मनुष्य नम्रता का ढ़ोंग करके दूसरों को अपनी ओर खींच लेता है। इसलिए समर्थ पापी से हुई दुश्मनी को खरीदी हुई मौत के समान समझना चाहिए। मूर्ख के लिए उपदेश निरर्थक है। यदि ज्ञान उपदेश के योग्य होते तो भगवान् श्रीकृष्ण मूर्ख दूर्योधन को समझा लेते। वे कहते है ईश्वर का भय त्यागकर यदि मनुष्य बीस सिर से युक्त होकर रावण के समान परम शक्तिशाली हो जाए तो कुबुद्धि लोग इसे उन्नति समझेंगे। इसके विपरित बुद्धिमान लोग उसे नष्ट हुआ मानेंगे। तुलसी कहते है कि जो मनुष्य अपने स्वार्थ एवं लाभ हेतु भगवान को छोड़कर लोगों को रिझाता है, उसकी दशा उस मुर्ख जैसी होतीं है जो आकाश को तकिया बनाना चाहता है–

**"लोगनि भलो मानव जो भलो होने की आस।**
**करत गगन को गेंहुआ सोसठ तुलसीदास।।** [6]

गोस्वामी जी कहते हैं कि जिस प्रकार गंगा में बाढ़ आनेपर वह अपने किनारे के समस्त वृक्षों को उखाड़ फेंकती हैं, बगुलों अर्थात् दंभियों के लिए हंसों (सज्जनों) को भगा देती है, कमल और भौंरों (सद्गूणों) से रहित हो जाती है। उसी प्रकार अनावश्य बल ऐश्वर के बढ़ जाने से सज्जन मनुष्य भी दोषयुक्त हो जाते हैं, सद्गुणों से रहित होकर पाप में लिप्त हो जाते है।

**"तुलसी तोरत तोर तरू बकहित हंस बिडारि।**
**विगत–नलिन–अलि, मलिन जल, सुरस रिहू बढ़िआरि।।** [7]
**"ब्यालहु तें विकराल बड़ा ब्यालफेन जिय जानु।**
**वहि के खाए मरत है वह खाए बिनु प्राणु।।** [8]

तुलसीदास कहते हैं कि अफीम को सर्प से भी अधिक भयंकर और घातक समझना चाहिए। क्योंकि सर्प काटने से मनुष्य उसी समय प्राण त्याग देता है, परंतु अफिम खाकर वह जीवित होते हुए भी प्राण हीन मुरदे के स्थान हो जाता है। वे कहते है कि अच्छे व्यक्ति बूरे व्यक्ति के सम्पर्क में आकर बुराई के मार्ग पर चलता है और उसको नैतिकता का हनन हो जाता है। दोहावली में तुलसी कहते हैं कि सूर्य द्वारा जल सोख के बारे में किसी को पता नहीं चलता, किन्तु जब मेघ बरसते हैं तो सभी लोग प्रसन्नता और आनंद से भर जाते हैं। उसी प्रकार सूर्य के समान ऐसे राजा बहुत सौभाग्य से प्राप्त होते हैं जो प्रजा को बिना कपट दिए उनसे उचित कर वसूलते है तथा समय आने पर उसे व्यवस्थित रूप से प्रजा के हित में खर्च करते हैं।

**"बरषत हरषत लोग सबकरषत लखै न कोई।**
**तुलसी प्रजा–सुभाग ते भूप भानु सो होई।।** [9]

गोस्वामी जी तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक और परिवारिक मूल्यों के बिगड़ते परिस्थितियों को साधते हुए कहते हैं कि यह सम्पूर्ण पृथ्वी रावण की राजसभा है। राजा इसमें अंगद के पैर के समान है। धर्म रूपी भगवान् राम और नीति रूपी सोता के प्रभाव से ही राजा रूपी अंगद का पैर शुभ समय में अचल होता है–

**"भूमि रूचिर रावण–सभा अंगद–पद महिपाल।**
**धरमराम, नय सील बल, अचल होत सुभ काल।।** [10]
**मंत्री, गुरु अरूवैद जो प्रिय बालहिं भयआस।**
**राज, धरम–तन तीनि कर होई बेगहीं नास।।** [11]

तुलसी कहते है उस राज्य और समाज को विनाश होने से कोई नहीं बचा सकता है जिसमें मंत्री और गुरु किसी भय, स्वार्थ या किसी अन्य कारण से हित की बात न कहकर हाँ में हाँ मिलाने लगें तो राजा के धर्म शरीर और राज्य का शीघ्र ही नाश हो जाता है। तुलसी कहते हैं किस प्रकार कार्य की आवश्यकता के अनुसार लकड़ी के चम्मच या धातु की करछु भी का प्रयोग अथवा त्याग किया जाता है, उसी प्रकार सज्जन स्वामी भी भली भाँति सोच समझकर मित्रों तथा सेवकों का संग्रह एवं त्याग करते है। अनावश्यक वस्तु के मोह में व्यक्ति उपना समयच और विवेक दोनो का नाश करता है। तुलसी कहते है समाज और परिवार में कीर्ति और यश व्यक्ति के पुरुषार्थ से ही प्राप्त होती है।

**"तुलसी निज करतूति बिनु मुक्त जात जब कोई।**
**गयो अजामिललोक हरि नाम सक्यो नहिं धोई।।** [12]

तुलसीदास कहते हैं जो मनुष्य अपना पुरुषार्थ किए बिना ही मुक्त हो जाता है, मृत्यु उपरांत भी उसकी कीर्ति नहीं होती। तुलसीदास अजमिल का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि यद्यपि अजामिल भगवान श्रीहरि के लोक में चला गया, लेकिन आज भी उसका नाम पापियों और अधर्मियों के साथ लिया जाता है।

अपने देश, समाज और लोगों के महत्व को बतलाते हुए तुलसीदास कहते हैं कि जिस दिन अपने लोग साथ छोड़ देते है, उस दिन कोई भी हित करनेवाला नहीं रह जाता। यद्यपि सूर्य–कमल का मित्र है, परंतु जब जल कमल का साथ छोड़ देता है तब वही सूर्य कमल को जलाकर सुखा देता है। तुलसी व्यक्ति को जीवन में सफलता प्राप्त करने के अनेक नैतिक मूल्यों के बारे में अपने काव्य में चर्चा किया है और बतलाया है किनका जीवन सफल है या हो सकता है–

**"मातु–पिता–गुरु–स्वामि–सिख सिर धरिकरहिं सुमाग।**
**लहेउ लामु हित जनम कर, नतरु जनन जग जाय।।** [13]

तुलसी की धारणा है।, जीवन की सफलता का रहस्य सद्गुण, सद्आचरण और जों मनुष्य माता, पिता, गुरु तथा स्वामी की सीख को सिर पर धारण कर उसका पालन करते हैं, उसका जीवन ही सफल होता है। अन्यथा इस संसार में जन्म लेना व्यर्थ है।तुलसीदास सज्जन दुर्जन के अंतर बतलाते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार बरसात की ऋतु में मेढ़क टर्राते है इसलिए कोयल मौन हो जाती है, उसी प्रकार बुरे समय में जब दुर्जन लोगों का प्रभाव बढ़ता है, तब सज्जन मौन हो जाते हैं। उनका मानना है कि समय का महत्व व्यक्ति को देना चाहिए और उसके अनुकूल ही अपना व्यवहार को बनाये रखना चाहिए। दोहावली में भगवान् की महत्ता के साथ–साथ गुरु, माता, पिता आदि का अनुशरण करने की बात कही गई है। व्यक्ति अच्छे संगति से अपने जीवन को सुव्यवस्थित कर जीवन को सफल बना सकता है। तुलसी की कवि दृष्टि का केन्द्र लोक नीति और लोक धर्म पर सदैव रहा है। दोहावली में तुलसी ने व्यक्ति लिए आवश्यक मानवीय गुणों का भी उल्लेख किया है। दूया, क्षमा, परोपकार, करुणा प्रेम, सहिष्णुता आदि गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही एक अच्छे समाज का निर्माण करते हैं। ईष्या–द्वेष कपट, बैर–भाव से रहित मानव जिस समाज में होते हैं, यह अवश्य ही उन्नति करता है। तुलसी धर्म पालन पर विशेष बल देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति यदि अपने धर्म का पालन करता हुआ, समाज में सदाचार को बढ़ावा देते हुए जीवन यापन करे तो निश्चय ही लोकमंगल का विधान होता है। तुलसी ने व्यक्तिगत धर्म नारी–धर्म, पति धर्म मानव–धर्म आदि नैतिक्ता का उल्लेख भी दोहावली में किया है। तुलसीदास वस्तुतः बहुआमी व्यक्तित्व के धनी एक ऐसे महापुरुष थे, जिन्होंने एक भक्त, कवि, उपदेशक, मनीषी, विद्वान एवं सुधारक के रूप में भारतीय समाज पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। उनके द्वारा रचित 'दोहावली' ने जन–जन को प्रभावित किया। तुलसीदास नीति विशारद् महापुरूष थे।

## निष्कर्ष

दोहावली मुख्यतः नीतिकाव्य के रूप में प्रतिष्ठित है। हिन्दी के समग्र नीतिकाव्य में तुलसी का एक विशिष्ट स्थान है और इस स्थान का प्रधान कारण दोहावली है। भारतीय नीतिकाव्य अत्यंत महान है, जिसमें भर्तृ हरि को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। कबीरदास के साथ तुलसी दास भारतीय नीति काव्य में उच्च स्थान रखते हैं। परन्तु तुलसी की नीति के दोहे कबीरदास और रहीम के नीति दोहों से विलक्षण है। यदि एक ओर कबीर दास के दोहों में फकीराना अन्दाज ज्यादा पुर असर है, तो रहीम में प्रसाद–गुण–सम्पन्न काव्यकला का आकर्षण अधिक है। किन्तु तुलसी के नीतिकाव्य में इन दोनों गुणों का विशिष्ट समन्वय प्राप्त होता है।

## संदर्भ


1. रहीम–कविसमीक्षा, ले. श्यामला कान्त वर्मा पृ.–72
2. कबीर सासाखीसार, ले. माया अग्रवाल पृ.–297
3. दोहावली, पद सं.–447
4. वही, पद सं.–469
5. वही, पद सं.–471
6. वही, पद सं.–491
7. वही, पद सं.–498/502
8. वही, पद सं.–508
9. वही, पद सं.–516/524
10. वही, पद सं.–531
11. वही, पद सं.–540
12. दोहावली की भूमिका–पृष्ठ सं.–3, गीता प्रेस गोरखपुर